बढ़ रहा है शेर घोटालों का सिलसिला

सुनील

आजकल जंगल के राजा शेर की हवाई यात्राएं खबरों में छाई है। यह अलग बात है कि बेचारा शेर ये यात्राएं बेहोश हालत में करता है।

पिछले वर्ष जून-जुलाई में राजस्थान के रणथंभौर टाइगर रिज़र्व से एक शेर और एक शेरनी को हेलिकॉप्टर से सरिस्का टाइगर रिज़र्व में पहुंचाया गया था। स्थानांतरित शेरों में रेडियो कॉलर लगाए गए हैं और उपग्रहों की मदद से उन पर नज़र रखी जा रही है। इस हाई-फाई कार्यक्रम पर डेढ़ करोड़ रुपया खर्च हुआ। शेरों को लाने के साथ सरिस्का टाइगर रिज़र्व के गांव हटाए जा रहे हैं। एक गांव हटाया जा चुका है तथा दो और गांवों को बाहर बसाने के लिए केन्द्र सरकार ने 26 करोड़ रुपए की मंज़ूरी दी है।

फिर 'टाइगर स्टेट' मध्यप्रदेश की बारी आई। बांधवगढ़ और कान्हा टाइगर रिज़र्वों से दो शेरनियों को इसी तरह हेलिकॉप्टर व ट्रक से पन्ना टाइगर रिज़र्व में छोड़ा गया। पहले बताया गया कि पन्ना टाइगर रिज़र्व में नर शेर ही बचे हैं, इसलिए मादाओं की ज़रूरत है। लेकिन जब मादा पहुंची, तो इकलौता नर भी गायब हो गया।

कई जानकारों ने शंका प्रकट की है कि शेरों के ये नाटकीय व महंगे स्थानांतरण कितने सफल होंगे। प्रकृति में पलने वाले शेर कोई कागज़ी शेर नहीं हैं, जिन्हें एक जगह से हटाकर दूसरी जगह स्थापित कर दिया जाए। सवाल यह भी है कि सरिस्का या पन्ना रिज़र्व से शेर गायब कैसे हो गए? साढ़े तीन दशकों से जारी प्रोजेक्ट टाइगर में अरबों रुपए खर्च करने के बाद ऐसे हालात क्यों पैदा हो रहे हैं?

2004 का दिसंबर महीना भारत के वन्य जीव संरक्षण कार्यक्रम और वन्य प्राणी प्रेमियों के लिए एक बड़ा झटका लेकर आया था। पता चला कि राजस्थान के सरिस्का टाइगर रिज़र्व में एक भी शेर नहीं है। इसी वर्ष पहले वहां 16 से 18 शेर होने का दावा किया गया था। इसके पहले सरिस्का में 26-27 शेर बताए जा रहे थे। लगता है शेरों की गिनती काफी हद तक फर्जी थी।

सरिस्का के इस भंडाफोड़ ने देश के वन्य जीवन संरक्षण के पूरे ढांचे को झकझोर दिया। प्रधान मंत्री ने सरिस्का में सीबीआई जांच का आदेश दिया। भारत के शेर संरक्षण के कार्यक्रम का मूल्यांकन करने और सुझाव देने के लिए एक टास्क फोर्स प्रसिद्ध पर्यावरणविद् सुनीता नारायण की अध्यक्षता में बनाई गई। इस टॉस्क फोर्स ने वर्ष 2005 में ही एक बहुमूल्य रिपोर्ट सरकार को सौंप दी थी। लेकिन हालात नहीं बदले।

इसके तीन वर्ष बाद मध्यप्रदेश के पन्ना टाइगर रिज़र्व का घपला सामने आया है। 542 वर्ग कि.मी. में फैले पन्ना टाइगर रिज़र्व में वर्ष 2008 की गणना में 24 शेर होने का दावा किया गया था। वर्ष 2002 में पन्ना में 31 की संख्या बताई गई थी। अचानक वे गायब हो गए हैं और वहां शेरों को आबाद करने के लिए शेर आयात करना पड़ रहा है। हालांकि एक शोधकर्ता रघु चुंडावत ने 2005 में ही वहां शेरों की संख्या पर सवाल उठाया था। जवाब में इस शोधकर्ता को पन्ना टाइगर रिज़र्व के अधिकारियों ने काफी परेशान किया था और उनके शोध में रुकावटें पैदा की थीं। केन्द्र सरकार ने अब पन्ना के मामले के भी जांच बिठाई है।

इसी प्रकार एक घपला मध्यप्रदेश के कूनो अभयारण्य में हुआ है। एशियाई सिंह (बब्बर शेर) सिर्फ गुजरात के गिर अभयारण्य में ही बचे हैं, किन्तु वहां उनकी संख्या ज़्यादा हो गई है। इसलिए इन्हें कूनो में रखने की योजना

बनी। वहां के सहारिया आदिवासियों के 24 गांवों को 1999-2001 के दरम्यान हटाकर बाहर बसाया गया। उनकी हालत अब बहुत खराब है। लेकिन उधर गुजरात सरकार के इंकार कर देने से सिंह भी नहीं आ पाए हैं।

भारत में वन्य प्राणियों को बचाने की मुहिम ज़ोर शोर से चल रही है। देश में राष्ट्रीय उद्यानों और अभयारण्यों की संख्या बढ़ते-बढ़ते छः सौ के करीब पहुंच चुकी है। इस मुहिम में वन्य प्राणियों के बीच शेर या बाघ को विशेष दर्जा दिया गया। यह माना गया है कि वन्य प्राणियों की भोजन ृंखला में चूंकि शेर सबसे ऊपर है, इसलिए शेरों की उपस्थिति एवं संख्या कुल मिलाकर उस इलाके की पारिस्थितिकी हालत का पैमाना होती है। अंतर्राष्ट्रीय चिंता एवं दबाव के बीच भारत में 1973 से प्रोजेक्ट टाइगर शुरू हुआ। वर्ष 2005 तक देश में कुल 28 टाइगर रिज़र्व बनाए जा चुके थे। बाद में आठ नए संरक्षित क्षेत्रों को टाइगर रिज़र्व का दर्जा मिला है। इनमें से सबसे ज़्यादा 6 मध्यप्रदेश में है। कहते हैं कि देश के लगभग तीन हज़ार शेरों में से 236 से 364 के बीच मध्यप्रदेश में है। लेकिन इस टाइगर स्टेट में भी शेरों के जीवन पर संकट छाया है। मशहूर कान्हा टाइगर रिज़र्व में भी नवंबर 2008 से मार्च 2009 के बीच के मात्र 5 महीनों में 6 शेरों की मौत की खबर है।

आम तौर पर ऐसे संकटों के जवाब में सरकार, वन विभाग, वन्य जीव प्रेमियों और मीडिया जगत की प्रतिक्रिया स्टाफ, सुरक्षा और धनराशि बढ़ाने की मांग के रूप में होती है। किन्तु मात्र ज़्यादा नाकेदारों, ज़्यादा बंदूकों और ज़्यादा बजट से यह संकट हल नहीं होने वाला है। दरअसल टाइगर टास्क फोर्स ने अपने विश्लेषण में बताया है कि सरिस्का और पन्ना दोनों टाइगर रिज़र्व ऐसे हैं, जहां देश के अन्य टाइगर रिजर्वों से काफी ज़्यादा पैसा व स्टाफ लगाया गया है। धनराशि और स्टॉफ के हिसाब से वे देश के सर्वोच्च पांच टाइगर रिजर्वों में हैं। पन्ना और सरिस्का टाइगर रिज़र्व पर अभी तक क्रमशः 20 करोड़ रुपए और 25 करोड़ रुपए अतिरिक्त खर्च किए जा चुके हैं। यह वन विभाग के सामान्य बजट तथा कर्मचारियों के वेतन व भत्तों के अतिरिक्त है। यदि इतना खर्च करने के बाद भी वहां शेर गायब होते जाते हैं, तो यह इस गरीब देश के बहुमूल्य संसाधनों की बरबादी है। इसे शेर घोटाला कहा जा सकता है।

शेरों की अनुमानित संख्या (2006)	
भारत	1411
मध्यप्रदेश	300
कर्नाटक	290
उत्तराखंड	179
उत्तरप्रदेश	109
महाराष्ट्र	103
तमिलनाडु	76
केरल	46
राजस्थान	32
छत्तीसगढ़	26
अरूणाचलप्रदेश	14

वन विभाग की एक दूसरी प्रतिक्रिया स्थानीय गांववासियों के मत्थे दोष मढ़ने की होती है। यह कहा जाता है कि ये गांव वाले शिकार करते हैं या शिकारियों की मदद करते हैं। उनकी चराई, वनोपज संग्रह, निस्तार और उपस्थिति मात्र से जंगल नष्ट होता है, और शेरों के प्राकृतवास में व्यवधान पैदा होता है। इस समस्या का समाधान स्थानीय गांववासियों के ऊपर कई तरह के प्रतिबंध लगाने तथा गांवों के विस्थापन में खोजा जाता है। किन्तु न तो अभी तक संरक्षित क्षेत्रों से गांव हटाने का पूरा काम हो पाया है और न गांववासियों के वन उपयोग पर पूरी तरह प्रतिबंध लगाना संभव हो पाया है। दरअसल जंगल में रहने वाले आदिवासियों और अन्य गांववासियों की जिन्दगी व रोज़ी-रोटी पूरी तरह जंगल पर आधारित है। इसलिए ये प्रतिबंध और विस्थापन न तो व्यावहारिक हैं और न वांछनीय। इस चक्कर में यह ज़रूर हो गया है कि वन विभाग और स्थानीय समुदाय के बीच स्थाई रूप से झगड़ा खड़ा हो गया है। वन्य जीवन संरक्षण और शेर बचाने के प्रयासों की नाकामी के पीछे यह एक बड़ा कारण है।

टाइगर टास्क फोर्स की रिपोर्ट में बताया है कि देश के 600 आरक्षित क्षेत्रों में करीब 40 लाख लोग रहते हैं, जिनमें बड़ी संख्या आदिवासियों की है। देश के 28 टाइगर रिजर्वों में 1487 गांव हैं, जिनमें करीब 4 लाख लोग रहते हैं। 'सरिस्का' में 27 गांव है और 'पन्ना' में 45 गांव है। इतने सालों के बाद भी इनमें चार-पांच गांवों को ही हटाकर दूसरी जगह बसाया जा सका है। गांव को दूसरी जगह

बसाना व समुचित पुनर्वास करना भी आसान नहीं है। लोगों की ज़िंदगी बरबाद हो जाती है। फिर सवाल पैसे का भी है। सारे गांव के पुनर्वास में अरबों-खरबों रुपयों की ज़रूरत होगी। जिस दर से अभी गांवों को बाहर बसाया जा रहा है, देश के सारे आरक्षित क्षेत्रों को गांव मुक्त बनाने में सौ-दो सौ साल लग जाएंगे। क्या तब तक देश के शेर व अन्य वन्य प्राणी सुरक्षित नहीं हो पाएंगे?

दरअसल भारत के वन्य जीव संरक्षकों का बुनियादी दृष्टिदोष इस संकट की जड़ में है। वे यह भूल गए कि जंगल में सिर्फ शेर, हाथी, गैंडे या हिरन ही नहीं रहते है बल्कि मनुष्य भी रहते हैं। भारत के आदिवासियों के बहुत सारे गांव घने जंगलों के बीच ही हैं। जंगल उनकी भी धरोहर है और उनका जीवन भी जंगल पर उतना ही आश्रित है। भारत के नक्शे पर आदिवासी इलाके और

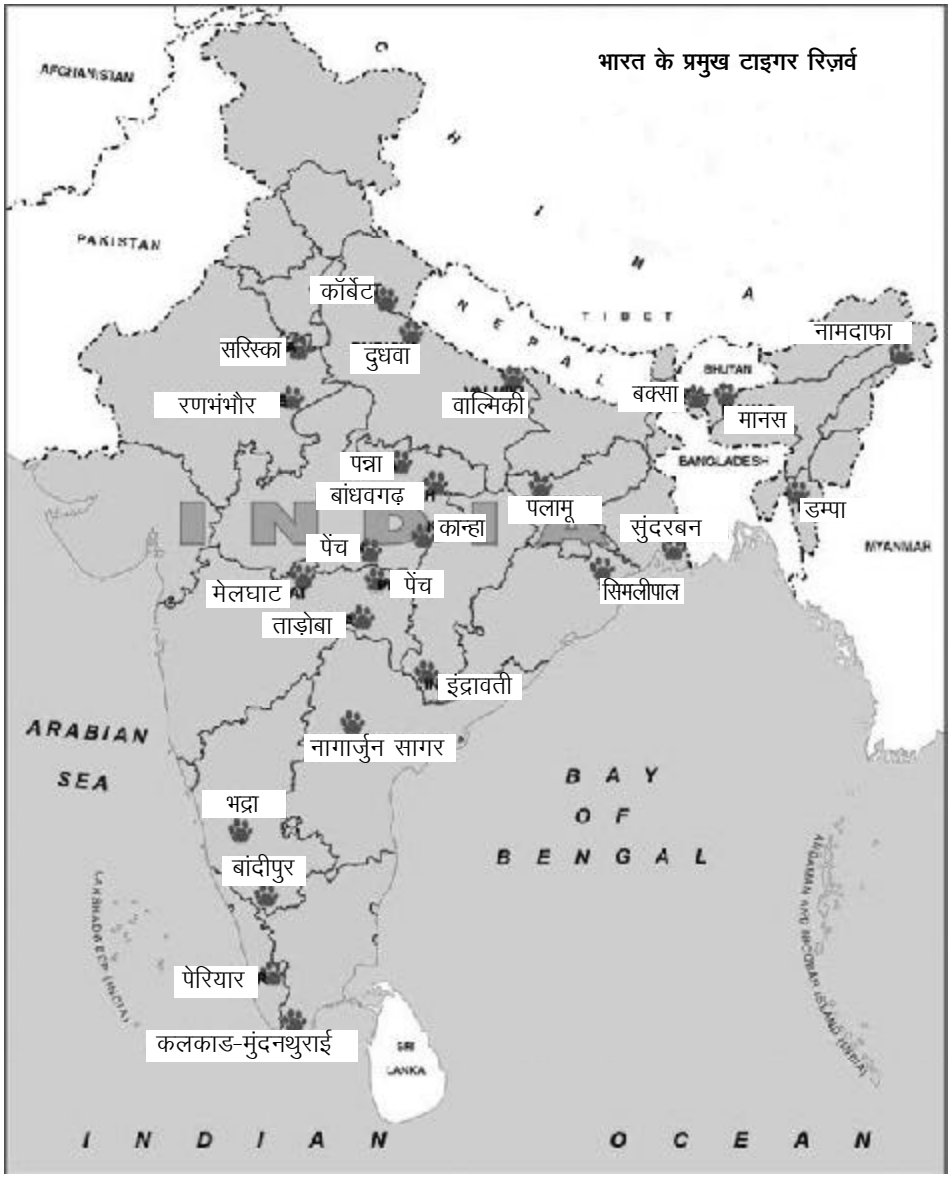

भारत के प्रमुख टाइगर रिज़र्व

नाम	गांवों की संख्या
बांदीपुर	54
कार्बेट	25
कान्हा	169
मानस	167
मेलघाट	58
पलामू	164
रणथंभौर	25
सिमलीपाल	65
सुन्दरवन	00
पेरियार	04
सरिस्का	27
बक्सा	89
इंद्रावती	56
नागार्जुन सागर	149
नामदाफा	02
दुधवा	37
कलकाड-मुंदनथुराई	16
वाल्मिकी	20
पेंच	99
पेंच	01
ताड़ोबा-अंधारी	06
बांधवगढ़	75
पन्ना	45
डम्पा	61
भद्रा	05
सतपुड़ा	60
नामेरी, पक्के	08
कुल योग	**1,487**

स्रोतः टाइगर टास्क फोर्स रपट

(नक्शा इंटरनेट के लिया गया है।)

जंगल वाले इलाके लगभग एक ही हैं। ये ही इलाके देश के सबसे गरीब इलाके भी हैं। इन गरीब आदिवासियों और अन्य वनवासियों से उनका एकमात्र सहारा जंगल छीन लेना आज़ाद भारत के बड़े अमानवीय कृत्यों और अन्यायों में से एक है।

इस दृष्टि दोष के कारण भारत के वन्य जीव संरक्षण के कानूनों, नियमों और योजनाओं में वनवासियों की ज़रूरतों व अस्तित्व की कोई जगह नहीं रखी गई है, बल्कि उसे गैर कानूनी बना दिया गया है। नतीजा यह हुआ है कि देश के सारे आरक्षित क्षेत्रों में वन विभाग और ग्रामवासियों के बीच तनाव एवं संघर्ष की स्थिति है। विभाग की जो ऊर्जा और संसाधन वास्तविक संरक्षण कार्य में लगने चाहिए, वे स्थानीय लोगों के खिलाफ प्रतिबंधों को लागू करने और उन्हें दूसरी जगह बसाने की तैयारी में लग रहे हैं।

विडंबना यह है कि देश के किसी भी आरक्षित क्षेत्र में इस बात का कोई वैज्ञानिक अध्ययन नहीं किया गया है कि वहां रहने वाले गांववासियों की चराई, वनोपज संग्रह, निस्तार, खेती या जंगल के अन्य उपयोग से वहां के वन्य प्राणियों को क्या एवं कितनी दिक्कत है? दोनों साथ-साथ रह सकते हैं या नहीं? ग्रामीणों की उपस्थिति से वन्य जीवन को अनिवार्य रूप से नुकसान होता है, यह देश के वन्य जीव संरक्षण प्रतिष्ठान का एक अंधविश्वास है, जिसके कारण समस्या का सही निदान नहीं हो पा रहा है।

यह ज़रूरी नहीं है वन्य जीव तथा ग्रामवासियों के हितों में अनिवार्य रूप से टकराव हो। कुछ साल पहले एक अध्ययन में पता लगा कि राजस्थान के भरतपुर पक्षी अभयारण्य में वहां चरने वाली भैसों से पक्षियों को आकर्षित करने और भोजन में मदद मिलती है। लेकिन वहां भैसों की चराई रोकने के लिए अभयारण्य के स्टाफ द्वारा चरवाहों पर गोली चलाने तक की घटनाएं हो चुकी हैं। जंगलों में आग नियंत्रण में भी गांववासियों की बड़ी भूमिका है। न केवल वे आग बुझाने में मदद करते हैं, बल्कि उनके पालतू पशुओं की चराई से जंगल की घास व झाड़ियों की वृद्धि नियंत्रित रहती है। यदि जंगल क्षेत्रों से गांवों को हटाकर चराई पूरी तरह रोक दी गई, तो घास व झाड़ियां इतनी बढ़ जाएंगी कि उनमें आग लगने पर उसे किसी हालत में काबू करना संभव नहीं होगा। ऑस्ट्रेलिया और अमरीका में पिछले कुछ समय में जंगलों में भीषण आग की घटनाएं हमारे लिए एक सबक हैं। हेलीकॉप्टरों और अनेकों फायर ब्रिगेडों के बावजूद इन आग पर काबू न पाया जा सका। भारत में भी जंगलों में आग की घटनाएं बढ़ रही हैं। यदि ग्रामवासियों को बाहर करने की अंधी व आत्मघाती नीति चलती रही, तो भारत में भी ऐसी घटनाएं हो सकती है।

सच तो यह है कि भारत के जंगलों और जंगली जानवरों का विनाश वहां रहने वाले आदिवासियों के कारण नहीं हुआ है। यदि ऐसा होता, तो काफी पहले जंगल और शेर खत्म हो जाने चाहिए थे। दरअसल, जंगल, जंगली जानवरों और आदिवासियों का तो सह-अस्तित्व रहा है। वनों और वन्य प्राणियों के विनाश का असली कारण तो आधुनिक विकास है, जो पिछले दो सौ सालों में जंगलों को निगलता गया है। राजाओं, नवाबों व अंग्रेज़ अफसरों द्वारा जानवरों का शिकार भी एक कारण रहा है।

सुनीता नारायण की अध्यक्षता वाले टाइगर टास्क फोर्स ने वन्य प्राणी संरक्षण की इस जन विरोधी नीति की खामी को पहचाना है। वनों में एवं उनके आसपास रहने वाले समुदायों की सक्रिय भागीदारी के बगैर वन्य प्राणी संरक्षण की कोई योजना सफल नहीं हो सकती है, इसकी चेतावनी उसने दी है। इसके लिए उनके हितों, अधिकारों और अस्तित्व को भी सुनिश्चित करना होगा। टास्क फोर्स ने इस बात को सूत्र रूप में कहा है - "शेरों का संरक्षण उन जंगलों के संरक्षण से अभिन्न रूप से जुड़ा है जहां वे रहते हैं तथा जंगलों का संरक्षण अभिन्न रूप से जंगल में रहने वाले लोगों की जिंदगियों से जुड़ा है।"

लेकिन लगता है कि सरकार में बैठे वन्य प्राणी संरक्षण के पुरोधाओं ने टाइगर टास्क फोर्स की इस समझदारी पर कोई ध्यान नहीं दिया है, और उसका ढर्रा एवं रवैया नहीं बदला है। इसकी एक झांकी 2007 के अंतिम दिनों में मिली, जब ताबड़तोड़ ढंग से देश के टाइगर रिजर्वों में कोर क्षेत्र या 'संवेदनशील शेर आवास' घोषित किए गए। कानून की ज़रूरत के मुताबिक विशेषज्ञ समिति बनाने से लेकर

उसकी रिपोर्ट तैयार होने और राजपत्र में अधिसूचना प्रकाशन तक की कार्यवाहियां एक महीने में पूरी कर ली गई। मध्यप्रदेश की विशेषज्ञ समिति ने तो टाइगर रिज़र्वों का दौरा करने या गांववासियों या अन्य व्यक्तियों से बात करने की भी ज़रूरत नहीं समझी, और मात्र भोपाल में एक बैठक करके आठ दिन के अंदर अपनी सिफारिशें दे दीं। कानून की भावना का मज़ाक बनाते हुए यह गजब की हड़बड़ी इसलिए की गई, क्योंकि 1 जनवरी 2008 से देश में वन अधिकार कानून लागू हो रहा था। टाइगर रिज़र्वों में रहने वाले ग्रामवासियों को अधिकार न मिल पाए, इसलिए अचानक वन विभाग इतना मुस्तैद हो गया था। यह कदम टकराव को बढ़ाने का ही काम करेगा। ***(स्रोत फीचर्स)***